रविवारीय

रेड कॉरिडोर में खौफ के पर्यायमाडवी हिंडमा का अंत

डॉ. ब्रह्मदीप अलूने

माडवी हिड़मा पर छह राज्यों की ओर से इनाम घोषित किया गया था और इसकी कुल राशि एक करोड़ अस्सी लाख रुपये थी. सैकड़ों सुरक्षाबलों की शहादत का जिम्मेदार खूंखार नक्सली हिड़माआंध्रप्रदेश में सुरक्षा बलों के हाथों मारा गया है और यह नक्सल अभियान की सबसे बड़ी सफलता है. इससे नक्सली समस्या के खत्म होने की उम्मीद बढ़ गई है. दरअसल माडवी हिडमा, नक्सली अभियान का बहुत मजबूत नेता था जो पीपुल्स लिबरेशन गुरिल्ला आर्मी का नेतृत्व भी कर रहा था. पीपुल्स लिबरेशन गुरिल्ला आर्मी भारतीय माओवादी आंदोलन की सैन्य रीढ़ है, जिसे कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ इंडिया (माओवादी) ने 2000 में औपचारिक रूप से गठित किया था. इसका उद्देश्य माओवादी विचारधारा के तहत जनयुद्धचलाना और भारतीय राज्य के विरुद्ध दीर्घकालिक सशस्त्र संघर्ष को संचालित करना था. पीपुल्स लिबरेशन गुरिल्ला आर्मी पारंपरिक सेना की तरह नहीं, बल्कि गुरिल्ला युद्ध पर आधारित एक लचीली, मोबाइल और अत्यधिक विकेंद्रीकृत सैन्य संरचना है. इसे तीन स्तरों, गुरिल्ला स्क्वॉड, प्लाटून, और कंपनी में बांटा गया है, जिनका संचालन अनुभवी माओवादी कमांडर करते हैं.

पीपुल्स लिबरेशन गुरिल्ला आर्मी की मुख्य ताकत इसका क्षेत्रीय आधार रहा है. बस्तर, झारखंड, उड़ीसा और महाराष्ट्र के घने जंगल इसकी गतिविधियों के लिए आदर्श युद्धभूमि रही हैं, जहां कठिन भौगोलिक परिस्थितियों का लाभ उठाकर इसने सुरक्षा बलों को भारी क्षति पहुंचाई. स्थानीय ग्रामीणों से सूचना, समर्थन और छिपाव पीपुल्स लिबरेशन गुरिल्ला आर्मी को अपनी गतिविधियां जारी रखने में मदद देता रहा है.

नक्सल आंदोलन ने पिछले दो दशकों में अपनी युद्ध शैली को इस प्रकार विकसित किया है कि कम संसाधनों के बावजूद वे सुरक्षा बलों को भारी क्षति पहुँचा सके. इस रणनीति का खास मास्टर माइंड था हिडमा. पिछले दो दशकों में रेड कॉरिडोर में जो सबसे दुर्दात नक्सली हमले हुए, उसके केंद्र में हिडमा ही था. खास तौर पर 2010 में हुई ताड़मेटला की घटना, 2013 में झीरम घाटी, 2017 में बुर्कापाल और 2020 में मिनपा.

इन सभी हमलों को नक्सलियों ने बेहद रणनीतिक तरीके से अंजाम दियाथा. ग्रामीणों से मिली सूचनाओं, मुखबिर तंत्र और सामाजिक दबाव के जरिए नक्सली सुरक्षा बलों की गतिविधियों पर लगातार नजर रखते थे. कई बार वे भ्रमित करने वाले नकली इनपुट फैलाते, जिससे सुरक्षा बल जाल में फंस जाएं. गुरिल्ला युद्ध, घातक एंबुश, आईईडी विस्फोट और भौगोलिक बढ़त का संयुक्त उपयोग नक्सलियों के द्वारा किया गया. नक्सली सुरक्षाबलों की मूवमेंट पर ग्रामीणों की मदद से नजर रखते थे. जंगलों और पहाड़ियों में छिपकर वे उचित समय मिलते ही घात लगाकर हमला कर देते थे. और अंत में सुरक्षाबलों के छुपने की जगह में आईईडी विस्फोट करते थे. इस रणनीति से सुरक्षाबलों को गहा नुकसान होता था. नक्सली हमला करने के बाद घने जंगल, संकरी पगडंडियों और पहाड़ियों से होते हुए भाग जाते थे. हिडमा एक रणनीति के तहत् बड़े हमलों में लगभग तीन सौ कैडरों की टुकड़ी का उपयोग करता था, जिससे सुरक्षा बलों पर दबाव बढ़ जाता था और हमला समाप्त होते ही नक्सली हथियार लूटकर अपनी क्षमता और बढ़ा लेते थे.

2010 में हुआ ताड़मेटला का हमला भारतीय सुरक्षा इतिहास का सबसे भीषण नक्सली हमला माना जाता है, जिसमें सीआरपीएफ की 76 जवानों की पूरी टुकड़ी को नक्सलियों ने बेरहमी से मार डाला था. यह क्षेत्र हिडमा के गांव के पास ही है. इस हमले ने देश को नक्सल समस्या की गंभीरता का एहसास कराया था और सुरक्षा रणनीतियों में बड़े बदलावों की आवश्यकता को उजागर किया था. ताड़मेटला की घटना ने भविष्य के अभियानों को अधिक सतर्क और तकनीक आधारित बनाने की दिशा में मार्ग प्रशस्त किया. इसके बाद हिंडमा ने झीरम घाटी की घटना को 2013 में अंजाम दिया. बस्तर की संकरी झीरम घाटी में कांग्रेस की परिवर्तन यात्रा को निशाना बनाते हुए माओवादियों ने बेहद

योजनाबद्ध तरीके से आईईडीविस्फोट और घातक फायरिंग की थी. इस हमले में वरिष्ठ नेता महेंद्र कर्मा, नंदकुमार पटेल, उनके पुत्रऔर बाद में घायल अवस्था में विद्या चरण शुक्ल सहित 27 लोगों की मृत्यु हुई थी. यह हमला केवल राजनीतिक विरोधियों को खत्म करने का प्रयास नहीं थाबल्कि माओवादियों का यह संदेश भी था कि वे बस्तर की राजनीतिक-सामाजिक प्रक्रिया को अपने सशस्त्र प्रभाव के बाह्र विकसित नहीं होने देना चाहते. इस घटना के बाद सरकार के द्वारा व्यापक स्तर पर सुरक्षा प्रोटोकॉल, राजनीतिक यात्राओं की निगरानी, इंटेलिजेंस संग्रह और माओवादी क्षेत्रों में सुरक्षा ढांचे की पुनर्रचना पर बल दिया गया.

हिडमा सीआरपीएफ की सबसे बड़ी चुनौती समझता था. अत: उसने एक बार फिर 2017 में एक घातक हमलें को अंजाम दिया. छत्तीसगढ़ के सुकमा ज़िले में 24 अप्रैल 2017 को हुआ बुर्कापाल ह्मला नक्सलवाद की सबसे घातक घटनाओं में से एक माना जाता है. इस हमले में सीआरपीएफ की 74वीं बटालियन के 25 जवान शहीद हो गए थे. नक्सलियों ने सड़क निर्माण कार्य की सुरक्षा में तैनात जवानों पर सुनियोजित घात लगाकर हह्मला किया, जिसमें पहले रेकी, फिर घेराबंदी और उसके बाद भारी फायरिंग की रणनीति अपनाई गई. इसी प्रकार नक्सलियों ने सुकमा ज़िले के मिनपा क्षेत्र में 21 मार्च 2020 को डीआरजी, एसटीएफ और कोबरा बटालियन के संयुक्त दल पर घात लगाकर भारी हमला किया था जिसमें 17 जवान शहीद हुए थे और कई जवान घायल हुए थे. सुरक्षा बल इलाके में नक्सलियों की मौजूदगी की सूचना पर निकले थे, लेकिन लौटते समय उन्हें मिनपा के घने जंगलों में सुनियोजित तरीके से एंबुश में फँसा लिया गया. नक्सलियों ने ऊंची जगहों से ताबड़तोड़ फायरिंग की और सुरक्षा बलों के हथियार भी लूट लिए.

हिडमा का दक्षिण बस्तर के जंगलों में मजबूत नेटवर्क था उसे स्थानीय समर्थन हासिल था इसीलिए वह भौगोलिक लाभ उठाकर बड़ी कार्रवाई को अंजाम दे दिया करता था. मिनपा कांड ने सुरक्षा बलों के लिए आधुनिक तकनीक, ड्रोन सर्विलांस, बेहतर संचार व्यवस्था और सड़क नेटवर्क को मजबूत करने की आवश्यकता को और स्पष्ट किया. हिडमा से निपटने के लिए सरकार ने सुरक्षाबलों से मिलकर एक नयी रणनीति पर काम करना प्रारम्भ किया. यह नई रणनीति सुरक्षा, विकास और जनसद्धागिता जैसे तीन स्तंभों पर आधारित है. सबसे पहले नक्सली इलाकों को चिन्हित करके सीआरपीएफ के कैम्प बढ़ाएं गए. फिर लगातार गश्त और निगरानी करके नक्सलियों की गतिविधियां सीमित की गई. इसके बाद जवान अब बिना तैयारी के जंगलों में गहराई तक नहीं जाते है और विश्वसनीय सूचना मिलने पर छोटे, तेज़ और लक्ष्य-केंद्रित अभियान चलाते हैं.

दूसरी महत्वपूर्ण रणनीति है सड़क निर्माण और कनेक्टिविटी, जिसने नक्सलियों के सुरक्षित आश्रय क्षेत्रोंको कमजोर किया. पहले बस्तर के बड़े हिस्से नक्सलियों के नियंत्रण में रहते थे क्योंकि सुरक्षा बल वहाँ पहुँच नहीं पाते थे. परंतु सड़कें, मोबाइल टावर, पुल और कैंप खुलने से वही इलाके धीरे-धीरे प्रशासन की पकड़ में आ गए. सुरक्षाबलों के कैंप गहरे जंगलों में स्थापित किए गए, जिससे नक्सलियों का बैक-फुट पर चले गए. तीसरी और सबसे महत्वपूर्ण रणनीति थी विशेष सशस्त्र दल बनाकर उनमें आदिवासी युवाओं की भर्ती बढ़ाई गई. इन्हें क्षेत्र का भूगोल, भाषा और सामाजिक ढांचा अच्छी तरह पता होता है, जिससे ऑपरेशनों में सफलता दर बढ़ी. सरकार ने विकास और सुरक्षा मॉडल अपनाया. स्वास्थ्य, शिक्षाऔर आजीविका योजनाओं ने ग्रामीणों को नक्सलियों से दूर कियाजो पहले मजबूरी या डर के कारण उनका साथ देते थे.

> इस प्रकार नई रणनीति ने नक्सलवाद को निर्णायक रूप से कमजोर करने में सफलता दिलाई और अंतत: हिडमा मारा गया. हिडमा का मारा जाना सीआरपीएफ की सबसे बड़ी सफलताओं में एक माना जा रहा है, क्योंकि वह नक्सलियों का सबसे चालाक, आक्रामक और खतरनाक कमांडर था. ताड़मेटला, बुर्कापाल और मिनपा जैसे बड़े हमलों का मास्टरमाइंड होने के कारण वह वर्षों से सुरक्षा बलों की सूची में शीर्ष लक्ष्य था. सीआरपीएफ ने लगातार क्षेत्रीय प्रभुत्व, खुफिया सूचना, तकनीकी निगरानी और स्थानीय बलों के समन्वय से उसके नेटवर्क को कमजोर किया. अंतत: सटीक सूचना आधारित अभियान में उसकी मौत ने नक्सलियों की कमान, मनोबल और रणनीतिक क्षमता को बड़ी चोट पहुंचाई. सीआरपीएफ के जांबाज़ जवानों की निरंतर बहादुरी, साहस और रणनीतिक क्षमता के कारण नक्सल समस्या अब समाप्ति की कगार पर पहुंच गई है. सीआरपीएफ ने जंगलों में एरिया डोमिनेशन, खुफिया आधारित ऑपरेशन, तकनीकी निगरानी और स्थानीय बलों के साथ समन्वय ने नक्सलियों की ताकत और गतिविधियों को निर्णायक रूप से कमजोर किया है. सीआरपीएफ ने जोखिम भरे इलाकों में कैंप स्थापित कर नक्सलियों के गढ़ को तोड़ा और उनके शीर्ष कमांडरों को खत्म किया. अब नक्सली नेतृत्व लगभग बिखर गया है और यह सरकार और सुरक्षाबलों की बड़ी सफलता है.

संघ : सामंजस्यपूर्ण और संगठित भारत का आदर्श

प्रो. विवेकानंद तिवारी
अध्यक्ष, आम्बेडकर पीठ एचपीयू, शिमला

संघ अपने कार्य के 100 वर्ष पूर्ण कर रहा है, ऐसे समय में उत्सुकता है कि संघ इस अवसर को किस रूप में देखता है. स्थापना के समय से ही संघ के लिए यह बात स्पष्ट रही है कि ऐसे अवसर उत्सव के लिए नहीं होते, बल्कि ये हमें आत्मचिंतन करने तथा अपने उद्देश्य के प्रति पुन: समर्पित होने का अवसर प्रदान करते हैं. साथ ही यह अवसर इस पूरे आंदोलन को दिशा देने वाले मनीषियों और इस यात्रा में नि:स्वार्थ भाव से जुड़ने वाले स्वयंसेवक व उनके परिवारों के स्मरण का भी है. सौ वर्षों की इस यात्रा के अवलोकन और विश्व शांति व समृद्धि के साथ सामंजस्यपूर्ण और एकजुट भारत के भविष्य का संकल्प लेने के लिए संघ संस्थापक डॉ. केशव बलिराम हेडगेवार की त्यागमय जीवन को आत्मसात करना होगा.

डॉ. हेडगेवार जन्मजात देशभक्त थे. भारतभूमि के प्रति उनका अगाध प्रेम और शुद्ध समर्पण बचपन से ही उनके क्रियाकलापों में दिखाई देता था. कोलकाता में अपनी मेडिकल की शिक्षा पूरी करने तक वे भारत को ब्रिटिश दासता से मुक्त कराने के लिए हो रहे सभी प्रयासों यथा - सशस्त्र क्रांति से लेकर सत्याग्रह तक से परिचित हो चुके थे. संघ में डॉक्टर जी के नाम से पहचाने जाने वाले डॉ. हेडगेवार ने मातृभूमि को दासता की बेड़ियों से मुक्त कराने वाले सभी प्रयासों का सम्मान किया और इनमें से किसी भी

> संघ ने नागरिक कर्तव्यों, पर्यावरण के अनुकूल जीवनशैली, सामाजिक समरसता, पारिवारिक मूल्यों और 'स्व'बोध पर ध्यान केंद्रित किया है, जिससे हर व्यक्ति मातृभूमि को परम वैभव के शिखर पर ले जाने में योगदान दे सके .पिछले सौ वर्षों में संघ ने राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के आंदोलन के रूप में उपेक्षा और उपहास से जिज्ञासा और स्वीकार्यता की यात्रा पूर्ण की है. संघ किसी का विरोध करने में विश्वास नहीं रखता. हमें विश्वास है कि संघ कार्य का विरोध करने वाला व्यक्ति भी एक दिन राष्ट्र निर्माण के इस पुनीत कार्य में संघ के साथ सहभागी होगा. ऐसे समय में जब विश्व जलवायु परिवर्तन से लेकर हिंसक संघर्ष जैसी चुनौतियों से जूझ रहा है, तब भारत का प्राचीन और अनुभवजन्य ज्ञान समाधान के रूप में नई दिशा प्रदान करने में सक्षम है. यह विशाल किंतु अपरिहार्य कार्य तभी संभव होगा, जब मां भारती की प्रत्येक संतान अपनी भूमिका को समझे तथा एक ऐसा राष्ट्रीय आदर्श निर्मित करने में योगदान दे जो दूसरों को अनुकरण करने के लिए प्रेरित करे. आइए, हम सब मिलकर सज्जन शक्ति के नेतृत्व में संपूर्ण समाज को साथ लेकर विश्व के समक्ष एक सामंजस्यपूर्ण और संगठित भारत का आदर्श प्रस्तुत करने का संकल्प लें.

प्रयास को कमतर नहीं समझा.

उस दौर में सामाजिक सुधार या राजनीतिक स्वतंत्रता चर्चा के प्रमुख विषयों में से थे. ऐसे समय में भारतीय समाज के एक डॉक्टर के रूप में उन्होंने उन समस्याओं पर ध्यान केंद्रित किया, जिनकी वजह से हम विदेशी दासता की बेड़ियों में जकड़े गए. साथ ही उन्होंने इस समस्या का स्थायी समाधान देने का भी निर्णय किया. उन्होंने अनुभव किया कि दैनिक जीवन में देशभक्ति की भावना का अभाव, सामूहिक राष्ट्रीय चरित्र का ह्रास, जिसके परिणामस्वरूप संकीर्ण पहचान पैदा होती है तथा सामाजिक जीवन में अनुशासन की कमी, विदेशी आक्रमणकारियों के भारत में पैर जमाने के मूल कारण हैं. साथ ही उन्होंने इसका भी अनुभव किया कि विदेशी दासता में लोग अपने गौरवपूर्ण इतिहास को भूल चुके हैं. जिसके चलते उनके मन में अपनी संस्कृति और ज्ञान परंपरा के संबंध में हीन भावना घर कर गई है.

उनका मानना था कि कुछ लोगों के नेतृत्व में केवल राजनीतिक आंदोलनों से हमारे प्राचीन राष्ट्र की मूलभूत समस्याओं का समाधान नहीं होगा. इसलिए उन्होंने लोगों को राष्ट्रहित में जीने के लिए प्रशिक्षित करने हेतु निरंतर प्रयास की एक पद्धति तैयार करने का निर्णय किया. राजनीतिक संघर्ष से आगे की इस दूरदर्शी सोच का परिणाम हमें शाखा आधारित संघ की अभिनव और अनूठी कार्यपद्धति के रूप में देखने को मिलता है. भारत के राजनीतिक स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेकर दूसरों को भी ऐसा करने के लिए प्रोत्साहित करते हुए, डॉ. हेडगेवार ने समाज के भीतर एक संगठन बनाने के बजाय पूरे समाज को संगठित करने के लिए इस कार्यपद्धति को विकसित किया. आज सौ वर्ष बाद भी हजारों युवा डॉक्टर हेडगेवार के बताए मार्ग पर चल रहे हैं और राष्ट्रहित में अपना सर्वस्व न्योछावर करने को तैयार हैं.

व्यंग्य

गमछा हिलाई के, गर्दा उड़ाई के जइयो ना...

रवि उपाध्याय
(लेखक व्यंगकार और राजनीतिक समीक्षक हैं)

बिहार में विधानसभा चुनाव सम्पन्न हो चुके हैं. इन चुनाव में नीतीश कुमार एक बार फिर से मुख्यमंत्री चुन लिए गए और उन्होंने दसवीं बार मुख्यमंत्री पद की शपथ लेकर एक कीर्तिमान स्थापित कर दिया. बिहार के इतिहास में यह घटना अभूतपूर्व है जब एक ही व्यक्ति बीस सालों तक मुख्यमंत्री होने के बाद भी बिहार की जनता ने उसी व्यक्ति को एक बार फिर से भारी बहुमत से मुख्यमंत्री चुना हो. बिहार विधानसभा चुनावों में जो घटनाएं खूब चर्चा में रहीं उसमें सबसे प्रमुख घटना प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी द्वारा गमछा घूमाना रही.

बिहार और उत्तर प्रदेश में गमछा घूमना अत्यंत ही खुशी का प्रतीक माना जाता है. जब व्यक्ति अति उत्साह में होता है तो वह आमतौर पर गमछा घुमा कर अपनी खुशी को व्यक्त करता है. जब प्रधानमंत्री द्वारा बिहार की रैली में गमछा घुमाया तो उनके समर्थक इस घटना को पौराणिक काल में ले गए. कुछ लोगों को मोदी को गमछा घुमाते देखकर ऐसा लगा कि वह कह रहे हो ओ विपक्ष वालों जरा होशियार यहां के हम हैं राजकुमार.

किसी ने कहा मोदी ने जो गमछा घुमाया तो वह गमछा नहीं सुदर्शन चक्र था. जिसकी विपक्षी दलों के पास कोई काट नहीं थी. प्रधानमंत्री ने बिहार विधानसभा चुनावों के दौरान तीन बार गमछा घुमाया है. उन्होंने पहली बार एक रैली में गमछा घुमाया, उसके बाद चुनाव रिजल्ट आने के बाद दूसरी बार उन्होंने दिल्ली के भाजपा कार्यालय में गमछा घुमाया और तीसरी बार उनका गमछा नीतीश कुमार के शपथ ग्रहण समारोह के दौरान पटना के गांधी मैदान में घूमा. गमछा घूमना निश्चय ही अच्छी घटना होगी लेकिन यह भी ध्यान देना होगा कि चुनाव के बाद के अगले पांच सालों तक मतदाताओं को गमछा न समझा जाए. उनके दुख दर्द और अभिलाषाओं पर ध्यान दिया जाए. माना कि समस्याओं को जड़मूल से नहीं खत्म किया जा सकता पर उनको कम तो किया ही जा सकता है. वैसे भी नेताओं से अच्छा घुमाना कोई नहीं जानता है. बेचारी वर्षों से उसी तेजी से नेताओं द्वारा घुमाई जाती रही है जितनी तेजी पृथ्वी घूम रही है.

प्रधानमंत्री द्वारा गमछा घुमाने के इस कदम से इला अरुण के द्वारा फिल्म में गाए गए लोकगीत की याद आ गई. जिसके बोल हैं - ऐ दिल्ली शहर में म्हारो घाघरो जो घूमियो ओ घूमियो ओ घूमियो....उई उई सब मर गिया म्हारो घाघरों जब घूम्यो .इला अरुण के इस गाने ने जैसे संगीत प्रेमियों के बीच में गर्दा उड़ा दिया था वैसा ही गर्दा प्रधानमंत्री मोदी ने अपना गमछा घुमा कर बिहार में उड़ा दिया. बिहार की जनता ने भी अपने अपने गमछे घुमा कर प्रधानमंत्री मोदी के गमछा घुमाने का दिल से हर्ष ध्वनि कर के उसी तरह जवाब दिया. उस समय ऐसा लग रहा था मानो कोई रॉक स्टार स्टेज पर अपना परफोर्मेंस दे रहा हो. इस घटना से मोदी ने सियासत में गर्दा ही उड़ा दिया. विपक्ष के नेताओं के पास मोदी के गमछा चक्र का कोई जवाब नहीं था. वैसे भी मोदी गर्दा उड़ाने में मास्टर हैं. उन्होंने 2014 में सत्ता में आने पर सबसे पहले झाड़ू थाम कर गर्दा को ही अपना निशाना बनाया था. तब से वे चुनाव दर चुनाव यही कर रहे हैं .विपक्षी नेता हैरान परेशान है उन कि समझ में नहीं आ रहा है कि क्या करें कौन सा दांव चले.

एक लोकसभा में विपक्ष के नेता से उम्मीद थी. उन्होंने भरसक प्रयास किया यहां तक कि उन्होंने बेगूसराय में अपने नए नए मित्र कन्हैया कुमार के साथ एक तालाब तक में छलांग लगा दी, पर ना तो कोई मछली हाथ लगी ना वोट ही हाथ लगे. वो चोर चोर को नारा लगा कर पूरे बिहार में चोर को ढूंढते फिरे. पर उन्हें चोर तो मिला नहीं, उलटे तेजस्वी ने उनका साथ छोड़ कर एकला चालो के नारे को अपना लिया. अब तो दबी जुबान से कांग्रेसी भी कहने लगे भैया जी ने तो देश के टुकड़े टुकडे करने का नारा लगवाने वाले नटवर लाल के साथ पार्टी को भी तालाब में डूबकी लगवा दी. यदि यही डुबकी वो प्रयागराज में जाकर कुंभ मेले में लगा लेते तो शायद बार बार हारने के शाप से मुक्ति मिल जाती. अब कहने वाले तो कहेंगे ही, क्योंकि हमें संविधान में कहने की ही तो आजादी दी गई है. ऐसे में करने की, कोई परवाह क्यों करे.

कहने की आजादी ही है कि हम स्टेज पर चढ़ कर या मीनार पर चढ़ कर किसी को भी मां बहन को गाली दे सकते हैं. किसी को भी चोर कह सकते हैं. किसी को भी देश से चले जाने को कह सकते हैं. हम दावा कर सकते हैं कि इस देश की मिट्टी में हमारा भी खून गिरा है. इसलिए देश हमारा है. अरे तुम से ज्यादा तो इस देश की मिट्टी बकरे, गाय और पाडो के खून से सनी है वो तो कभी देश का मालिक होने का दावा नहीं करते.

इस देश की मिट्टी में किसानों का पसीना मिला है उन्होंने तो कभी दावा नहीं किया की यह धरती और ये दुनिया और यह वतन हमारा है. दावा इसलिए नहीं किया कि दरअसल यह धरती उन्हीं की धरोहर है. वे ही उसके असली मालिक हैं. इस देश की मिट्टी में असल खून तो सरहदों पर तैनात उन जाबांज सैनिकों का मिला है जिन्होंने हंसते हंसते हुए अपने प्राणों को इस सरजमीं पर न्योछावर कर दिया और प्राण त्यागते समय यह कह गए कि अब तुम्हारे हवाले वतन साथियों...

उच्चतम न्यायालय का राज्यपाल की शक्ति पर राय!

राजीव खण्डेलवाल
लेखक कर सलाहकार एवं पूर्व बैतूल नगर सुधार न्यास अध्यक्ष

8 अप्रैल को तमिलनाडु सरकार द्वारा विधानसभा में पारित विधेयकों को राज्यपाल द्वारा लंबे समय तक लंबित रखने के विरुद्ध दायर याचिका पर उच्चतम न्यायालय ने ऐतिहासिक निर्णय दिया. इस निर्णय में राज्यपाल को विधेयकों पर निर्णय लेने के लिए अधिकतम तीन माह की समय सीमा निर्धारित की गई. संविधान के अनुच्छेद 200 के अनुसार राज्यपाल के निर्णय में निम्न पांच प्रकृति हो सकती है- 1. स्वीकृति देना, 2. रोकना, 3. राष्ट्रपति के पास भेजना, 4. संशोधन सुझाना, 5. विधानमंडल को पुनर्विचार हेतु लौटाना.

यही वह पृष्ठभूमि थी, जिसके बाद माननीया राष्ट्रपति ने संविधान के अनुच्छेद 143 के अंतर्गत 14 प्रश्नों पर सलाह (राय) मांगी, जिसे राष्ट्रपति का संदर्भ कहा जाता है, जो सोलवा संदर्भ था. इस अनुच्छेद के अंतर्गत सुप्रीम कोर्ट की सलाह राष्ट्रपति के लिए बंधनकारी नहीं है.

सलाहपूर्ण निर्णय का सार-प्रश्न क्रमांक-01 पर सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि राज्यपाल के पास विधेयक रोकने का पूरा 'एब्सलूट' अधिकार नहीं है. परंतु, साथ ही यह भी कह दिया कि स्वीकृति देने की कोई समय सीमा तय नहीं की जा सकती है. यही वह बिंदु है, जहाँ सलाह स्वयं अपने निर्णय व उसकी भावना का विरोध करता दिखता है- क्योंकि मिठ बोले कम तोले की तरह, समय सीमा न होने का व्यवहारिक अर्थ यही है कि राज्यपाल विधेयक को जितनी देर चाहें रोक सकते हैं. इसके विपरीत, 8 अप्रैल का आदेश बिल्कुल स्पष्ट था-राज्यपाल 3 महीने के भीतर निर्णय लेने को बाध्य होंगे. यह नई सलाह पूर्व के निर्णय की समय सीमा की बाध्यता को समाप्त कर देती है. कहावत की तरह स्थिति बन गई- कर्ता से करतार हारे, क्योंकि जिन संवैधानिक भावनाओं के आधार पर समय सीमा तय की गई थी, वही अब इस राय में हवा हो गईं.

परिणामत: - राज्यपाल व राष्ट्रपति अब बिना किसी समय-सीमा के, अपने विवेकाधिकार पर निर्भर रहते हुए विधेयकों को ठंडे बस्ते में डाल कर कानून बनने से रोक सकते हैं. न्यायालय की यह टिप्पणी कि अनावश्यक देरी होने पर न्यायालय हस्तक्षेप कर सकता है, व्यावहारिक समाधान नहीं है. पहले सरकार सिर्फ राज्यपाल- राष्ट्रपति की बाट जोहती थी, अब उसे न्यायालय की चौखट भी देखनी होगी. इस आदेश से राज्यपालों के लिए एक तरह से- रिंद के रिंद रहे, हाथ से जन्नत न गयी वाली स्थिति बन गई है.

जनता द्वारा चुनी गई विधानसभा का पारित विधेयक यदि राज्यपाल के अड़ियल रुख तथा राजनीतिक द्वेषवश महीनों-सालों तक रोका जाए, तो यह भारतीय जनतंत्र की सबसे कमजोर कड़ी ही कहलाएगी. इस कमी का इलाज करने के बजाय उच्चतम न्यायालय की यह राय उस पर मोहर लगाती प्रतीत ही होती है. और जिस ख़लक की ज़बान खुदा का नक्कारा, होता है, उसकी स्थिति अब तो कपास तो ओटन को ही बनो हो गई है.

न्यायिक अनुशासन पर प्रश्न - महत्वपूर्ण प्रश्न यह उठता है कि— क्या 8 अप्रैल का जस्टिस जे बी पारदी वाला की अध्यक्षता वाली दो सदस्यीय पीठ का फैसला आज भी बाध्यकारी है? या पाँच-न्यायाधीशों की यह सलाहपूर्ण राय उस निर्णय को अप्रभावित कर देगी? विडंबना यह है कि इसी सलाह के निर्णय के दो दिन पूर्व ही इसी उच्चतम न्यायालय ने न्यायाधिकार सुधार अधिनियम 2021 को रद्द करते हुए महत्वपूर्ण टिप्पणी की थी- उच्चतम न्यायालय के निर्णय बाध्यकारी होते हैं. संसद उन्हें दरकिनार नहीं कर सकती है. कार्यपालिका दखलंदाजी न करें. तो क्या अब सर्वोच्च न्यायालय ने राष्ट्रपति को उक्त राय देकर स्वयं के उक्त सिद्धांत को कमजोर नहीं किया?

कपिल सिब्बल की टिप्पणी और वास्तविकता- वरिष्ठ अधिवक्ता कपिल सिब्बल ने इसे विपक्षी सरकारों की जीत बताया. परंतु उनका कथन निम्नलिखित कारणों से त्रुटिपूर्ण है—

1. विधायिका की सर्वोच्चता तो 8 अप्रैल के निर्णय में भी स्वीकार की गई थी. जिस मुख्य आधार पर कपिल सिब्बल ने उच्चतम न्यायालय की इस राय के निर्णय को विपक्ष की सरकारों की जीत बतलाया है.
2. अनावश्यक देरी की परिभाषा न्यायालय ने तय नहीं की. यानी अंतत: राज्य सरकारों को न्यायालय में यह सिद्ध करना होगा कि देरी अनुचित व औचित्य हीन है.
3. तीन महीने की समय सीमा हटाई गई- गयी भैंस पानी में
4. अनुमानित स्वीकृति की संभावना को भी अनुच्छेद 201 में निहित राज्यपाल की शक्तियों के तहत खारिज कर दिया गया- यह केंद्र और राष्ट्रपति की जीत है, न कि राज्यों की.

वास्तव में विपक्षी दलों के चार राज्यों के 33 विधेयक पहले से ही राज्यपाल-राष्ट्रपति की स्वीकृति की प्रतीक्षा में हैं— पश्चिम बंगाल- 19, कर्नाटक- 10, तेलंगाना- 3, केरल- 1. इन विधेयकों की अस्पताल की इमरजेंसी जैसी स्थिति का भी इस सलाहपूर्ण राय पर कोई सकारात्मक प्रभाव नहीं पड़ा.

न्यायिक निर्णयों का दो-तरफा भाव- माननीय उच्चतम न्यायालय के हाल के कई फैसले यह संकेत देते हैं कि निर्णयों की व्याख्या ठीक उसी प्रकार से की जा सकती है, जिस प्रकार कि आधा गिलास खाली है अथवा भरा है. कुछ महत्वपूर्ण निर्णय देखें तो अक्सर दो विरोधी तत्व एक साथ उपस्थित दिखते रहते हैं— एक भाग हेडलाइन बनता है, दूसरा भाग सरकार की स्थिति को मजबूत करता है. उदाहरण- 1. वनशक्ति मामले की पुनर्विचार याचिकाएँ. पहले पर्यावरणीय आधार पर परियोजनाओं पर रोक, फिर ऐतिहासिक रूप से स्वयं के फैसले को वापस ले लेना.

स्थिति—

जुल्म भी होता रहे, होती रहे फ़रियाद भी,
बाग़बां भी खुश रहे और खुश रहे सैय्याद भी.

चुनाव आयुक्त नियुक्ति मामला- न्यायालय ने चुनाव आयुक्त की निष्पक्षता सुनिश्चित करने हेतु उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश को शामिल करने की व्यवस्था बताई थी. परंतु सरकार ने नया कानून बनाकर हटा कर उनकी जगह केंद्रीय मंत्री को शामिल कर दिया.

इस प्रकार निष्पक्ष चुनाव आयुक्त की नियुक्ति की संभावनाएं धूमिल ही नहीं बल्कि समाप्त हो गई. उक्त कानून को चुनौती देने वाली याचिका की सुनवाई न्यायालय ने आने वाले चुनावों के बावजूद नहीं की. जिस कारण से अब तक दो-दो चुनाव आयुक्त नियुक्त हो चुके हैं जिनकी निष्पक्षता पर एक इतिहास लिखा जा सकता है. कल यदि कानून रद्द हो गया तो यह स्थिति जिन्न को वापस बोतल में डालने जैसी जटिल होगी.

इलेक्टोरल बॉन्ड मामला- बॉन्ड असंवैधानिक घोषित, पर धन-वापसी या जांच के आदेश नहीं.**बिहार एसआईआर मामला**- मतदाता सूची की अनियमितताओं पर न्यायालय की सख्त टिप्पणियाँ, पर अभी तक कोई निर्णायक आदेश नहीं.

महाराष्ट्र सरकार का मामला- न्यायालय ने इसे अवैध सरकार कहा, पर सरकार यथावत चलती रही. अभी तक विधायकों की अयोग्यता पर कोई निर्णय नहीं.

इन तमाम उदाहरणों से महसूस होता है कि न्यायिक गुणवत्ता में पिछले समय में गिरावट आई है, जो चिंता जनक है.